

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 4 अध्याय 7: दक्ष के यज्ञ की परिपूर्ति

14 September 2026

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



जब दक्ष शुद्ध हृदय से ध्यान करते हैं, तब परम भगवान् श्रीहरि स्वयं यज्ञ में प्रकट होते हैं, गरुड़ पर आरूढ़, सूर्य से भी अधिक तेजस्वी — और समस्त सभा उठकर विस्मय से नत हो जाती है।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विङ्गडम् में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। पिछले अध्याय में ब्रह्मा देवताओं को कैलास ले गए और भगवान् शिव से याचना की कि वे दक्ष को क्षमा करें और ध्वस्त यज्ञ को पुनः स्थापित करें। यह सप्तम अध्याय कृपा तथा परिपूर्ति का अध्याय है। ब्रह्मा की प्रार्थना से प्रसन्न होकर भगवान् शिव अपराध को हँसकर टाल देते हैं और जो खो गया

था उसे पुनः लौटा देते हैं — दक्ष को जीवन, आहत देवताओं को पूर्णता। यज्ञ पुनः आरम्भ होता है, और इस बार वह अपने सच्चे फल तक पहुँचता है: परम भगवान् श्रीहरि स्वयं सभा के समक्ष प्रकट होते हैं, और एक-एक करके देवगण तथा ऋषि उनकी महिमा गाते हैं। दक्ष, जिनका हृदय अन्ततः द्वेष से धुल चुका है, कृतज्ञता की अपनी प्रार्थना अर्पित करते हैं। यह भगवान् की असीम करुणा का, एक पुरानी शत्रुता के उपचार का, और उस यज्ञ की परिपूर्ति का अध्याय है जो अभिमान में आरम्भ हुआ किन्तु भक्ति में समाप्त होता है — और यह इस कोमल समाचार के साथ बन्द होता है कि सती अपने स्वामी से पुनः मिलने के लिए फिर से जन्म लेंगी।

अध्याय की जानकारी

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 4 (चतुर्थ स्कन्ध)
- अध्याय: 7 (सप्तम अध्याय)
- अध्याय का शीर्षक: दक्ष के यज्ञ की परिपूर्ति
- मुख्य वक्ता: महर्षि मैत्रेय, विदुर को अपने उपदेश की निरन्तरता में (जिसमें शिव, दक्ष तथा एकत्रित देवताओं के वचन उद्धृत हैं)
- मुख्य श्रोता: विदुर
- मुख्य स्थल: दक्ष का यज्ञ-स्थल, पुनः स्थापित
- केन्द्रीय विषय: भगवान् शिव की कृपा, दक्ष तथा देवताओं का पुनर्जीवन, श्रीहरि का प्राकट्य, तथा यज्ञ की परिपूर्ति
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 4, अध्याय 7, श्लोक 1-61
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

पिछले अध्याय का सन्दर्भ

अध्याय 6 में, पराजित देवगण ब्रह्मा के पास आए, जिन्होंने उन्हें बताया कि उनका दोष भगवान् शिव को उनके अधिकारपूर्ण भाग से वंचित करना था, और उन्हें कैलास पर्वत पर उनकी क्षमा माँगने के लिए ले गए। वहाँ उन्होंने शिव को शान्त तथा क्रोध से रहित पाया, और ब्रह्मा ने एक सुन्दर प्रार्थना अर्पित की, शिव की परम महिमा को स्वीकार करते हुए और यह विनती करते हुए कि दक्ष पुनः जीवित हों, आहत देवगण पूर्ण हों, तथा ध्वस्त यज्ञ शिव के भाग के पुनः स्थापित होने के साथ पूर्ण हो। यह अध्याय शिव के करुणामय उत्तर से आरम्भ होता है।

भगवान् शिव की कृपा

ब्रह्मा की विनती से प्रसन्न होकर, भगवान् शिव हृदय से हँसे और बिना किसी द्वेष के बोले। उन्होंने कहा कि वे भगवान् की माया से मोहित जनों के दुष्कर्मों का न तो चिन्तन करते हैं और न स्मरण; उन्होंने जो दण्ड दिया था वह केवल एक शिक्षा देने के लिए था। तब उन्होंने जो खो गया था उसे पुनः लौटा दिया: दक्ष, जिसका शिर जल गया था, यज्ञपशु बकरे का शिर पाए; भग मित्र के नेत्रों से अपना भाग देखे; पूषा यजमान के दाँतों से चबाए; जिन ऋत्विजों की भुजाएँ छिन गईं वे अश्विनीकुमारों की भुजाओं का प्रयोग करें, और भृगु बकरे की दाढ़ी धारण करें। जब देवगण तथा ऋषियों ने ये कृपापूर्ण वचन सुने, तो वहाँ उपस्थित प्रत्येक प्राणी ने प्रसन्न हृदय से “साधु! साधु!” पुकारा।

उन्होंने बकरे का शिर दक्ष के धड़ से जोड़ दिया, और रुद्र की कृपादृष्टि पाकर दक्ष तुरन्त मानो निद्रा से जाग उठे और अपने समक्ष भगवान् शिव को देखा। उसी क्षण जिस द्वेष ने उनके हृदय को शिव के प्रति विषाक्त कर रखा था, वह घुल गया।

तदा वृषध्वजद्वेषकलिलात्मा प्रजापतिः ।

शिवावलोकामभवच्छरद्ध्रुद इवामलः ॥ १० ॥

tadā vṛṣadhvaja-dveṣa- kalilātmā prajāpatiḥ śivāvalokād abhavaḥ charad-dhrada ivāmalaḥ

अर्थ: तब दक्ष, प्रजापति, जिनका हृदय भगवान् शिव के द्वेष से मलिन हो गया था, शिव की कृपादृष्टि से शुद्ध हो गए — शरद् ऋतु के सरोवर के समान निर्मल। (स्कन्ध 4, अध्याय 7, श्लोक 10)



भगवान् शिव की कृपा से पुनर्जीवित होकर और उनकी कृपादृष्टि पाकर, दक्ष उठ खड़े होते हैं और अपने समक्ष शिव को देखते हैं, उनका हृदय अपने पुराने द्वेष से धुला हुआ, शरद् के सरोवर के समान निर्मल (श्लोक 9-10)।

दक्ष भगवान् शिव की स्तुति करना चाहते थे, किन्तु अपनी मृत पुत्री का स्मरण करते ही स्नेह तथा शोक ने उन्हें अभिभूत कर दिया और उनका कण्ठ अश्रुओं से रूँध गया। कठिनाई से स्वयं को सँभालकर, उन्होंने सच्ची भक्ति से भगवान् की स्तुति की, यह विस्मय व्यक्त करते हुए कि शिव तथा श्रीहरि पतितों के प्रति भी उपेक्षा नहीं दिखाते, और उन्होंने उन्हें वैसे ही सुधारा जैसे कोई गोपाल अपने पशुओं को मार्ग दिखाता है — दण्ड केवल उद्धार के लिए देते हुए।

यज्ञ पुनः आरम्भ होता है

शिव की क्षमा प्राप्त कर तथा ब्रह्मा से विदा लेकर, दक्ष ने आचार्य तथा ऋत्विजों द्वारा अनुष्ठान को पुनः आरम्भ करवाया। किसी भी अशुद्धि को दूर करने तथा यज्ञ की निरन्तरता को पुनः स्थापित करने के लिए, ब्राह्मणों ने भगवान् विष्णु के निमित्त पुरोडाश नामक आहुति अर्पित की।



शिव की क्षमा प्राप्त कर, आचार्य तथा ऋत्विज दक्ष के यज्ञ को पुनः आरम्भ करते हैं, भगवान् विष्णु के निमित्त पवित्र आहुति अर्पित करते हुए (श्लोक 16-17)।

श्रीहरि का प्राकट्य

तब, जब दक्ष तथा अध्वर्यु ऋत्विज निष्कपट, शुद्ध मन से भगवान् का ध्यान कर रहे थे, परम भगवान् श्रीहरि स्वयं उनके समक्ष प्रकट हुए।

अध्वर्युणात्तहविषा यजमानो विशाम्पते ।

धिया विशुद्धया दध्यौ तथा प्रादुरभूद्धरिः ॥ १८ ॥

adhvaryuṇāṭṭa-haviṣā yajamāno viśāmpate dhiyā viśuddhayā dadhyau tathā prādurabhūd dhariḥ

अर्थ: हे नरेश, जब यजमान दक्ष ने आहुति धारण किए हुए अध्वर्यु के साथ शुद्ध बुद्धि से ध्यान किया, तब भगवान् श्रीहरि स्वयं प्रकट हुए। (स्कन्ध 4, अध्याय 7, श्लोक 18)

समस्त उपस्थित जनों के तेज को अपनी उस प्रभा से आच्छादित करते हुए जिसने दसों दिशाओं को प्रकाशित कर दिया, भगवान् गरुड़ पर आरूढ़ थे। श्याम वर्ण के, स्वर्ण की करधनी धारण किए, सूर्य के समान मुकुटधारी, उनका मुख काली अलकों तथा कुण्डलों से सुशोभित था; उन्होंने अपनी आठ भुजाओं में शंख, कमल, चक्र, बाण, धनुष, गदा, खड्ग तथा ढाल धारण किए थे; लक्ष्मी देवी उनके वक्ष पर विराजमान थीं, और उनके शिर के ऊपर चन्द्रमा-सा श्वेत छत्र सुशोभित था। उन्हें देखकर, ब्रह्मा, इन्द्र, भगवान् शिव तथा समस्त देवगण तुरन्त उठ खड़े हुए और नीचे झुककर प्रणाम किया; और, उनके तेज से अपना तेज मन्द पड़ते हुए, वे हाथ जोड़कर विस्मय में खड़े हुए और अपनी सामर्थ्य भर उनकी महिमा गाने लगे।



उनकी प्रभा से अपना तेज मन्द पड़ते हुए, ब्रह्मा, इन्द्र, भगवान् शिव तथा समस्त देवगण एवं ऋषि उठकर श्रीहरि को प्रणाम करते हैं, हाथ जोड़कर उनकी महिमा गाते हुए
(श्लोक 22-25)।

एक-एक करके — दक्ष, ऋत्विज, ऋषि, रुद्र, भृगु, ब्रह्मा, इन्द्र, यजमानों की पत्नियाँ, ऋभु तथा साध्यगण, और लोकपाल — प्रत्येक ने अपने-अपने दर्शन के अनुसार भगवान् की महिमा गाई: समस्त हृदयों के भीतर साक्षी के रूप में, समस्त यज्ञ के लक्ष्य के रूप में, माया की लीला से परे उस एक सत्य के रूप में, जिनकी कृपा से ही आत्मा मुक्त होती है (श्लोक 25-49)।

तब स्वयं भगवान् बोले, क्योंकि यह दक्ष का शिव के प्रति तिरस्कार ही था जिसने आरम्भ में यज्ञ को ध्वस्त किया था, और उस घाव को भरने के लिए केवल पुनर्स्थापित शिर से अधिक की आवश्यकता थी। दक्ष को सीधे सम्बोधित करते हुए, श्रीहरि ने घोषणा की कि वे स्वयं, ब्रह्मा तथा शिव मिलकर सृष्टि के परम कारण हैं, और समस्त प्राणियों के भीतर विराजमान एक ही आत्मा के रूप में उन तीनों में वास्तव में कोई भेद नहीं है। उन्होंने कहा कि अपनी ही शक्ति द्वारा कार्य करते हुए, वे प्रत्येक कार्य के अनुसार सृष्टिकर्ता, पालक तथा संहारक के भिन्न-भिन्न नाम धारण करते हैं; केवल वही जिसे वास्तविक ज्ञान नहीं है, यह कल्पना करता है कि ब्रह्मा या शिव, अथवा कोई भी प्राणी, उनसे स्वतन्त्र है। जैसे कोई मनुष्य अपने ही शिर या हाथ को अपने से पृथक् नहीं मानता, वैसे ही उनका सच्चा भक्त उन्हें किसी भी अन्य प्राणी से पृथक् नहीं मानता। और जो कोई ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव को तीन विभाजित व्यक्तियों के रूप में देखना छोड़ देता है, भगवान् ने कहा, वह अन्ततः सच्ची शान्ति को प्राप्त करता है (श्लोक 50-54)।

त्रयाणामेकभावानां यो न पश्यति वै भिदाम् ।

सर्वभूतात्मनां ब्रह्मन् स शान्तिमधिगच्छति ॥ ५४ ॥

trayāṇām eka-bhāvānām yo na paśyati vai bhidām sarva-bhūtātmanāṁ brahman sa śāntim adhigacchati

अर्थ: हे ब्राह्मण, जो कोई ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव को तीन पृथक् प्राणी न मानकर, उन्हें प्रत्येक प्राणी के भीतर विद्यमान एक ही आत्मा जानता है, वह सचमुच शान्ति को प्राप्त करता है। (स्कन्ध 4, अध्याय 7, श्लोक 54)

यह शिक्षा सुनकर, दक्ष ने उन्हीं को समर्पित यज्ञ के द्वारा श्रीहरि की पूजा की, और भगवान् रुद्र को उनका अधिकारपूर्ण भाग तथा अन्य देवताओं को उनके भाग अर्पित किए, यहाँ तक कि यज्ञ उन पवित्र अवभृथ-स्नानों के साथ विधिवत् पूर्ण हुआ जो किसी महान् अनुष्ठान का समापन करते हैं। धर्म में भक्ति का आशीर्वाद पाकर, सभा शान्ति से विदा हुई, और देवगण स्वर्ग को गए (श्लोक 55-57)।

सती का पुनरागमन

मैत्रेय ने आशा के एक कोमल वचन के साथ कथा को समाप्त किया। दक्ष से उत्पन्न शरीर को त्यागकर, सती ने पुनः जन्म लिया — इस बार हिमालय के स्वामी हिमवान् की पत्नी मेना की पुत्री के रूप में।

एवं दाक्षायणी हित्वा सती पूर्वकलेवरम् ।
जज्ञे हिमवतः क्षेत्रे मेनायामिति शुश्रुम ॥ ५८ ॥

evam dākṣāyaṇī hitvā satī pūrva-kalevaram jajñe himavataḥ kṣetre menāyām iti śuśrūma

अर्थ: इस प्रकार, अपने पूर्व शरीर को त्यागकर, दक्ष की पुत्री सती ने पुनः जन्म लिया — ऐसा हमने सुना है — हिमवान् के देश में, मेना की पुत्री के रूप में। (स्कन्ध 4, अध्याय 7, श्लोक 58)

जैसे प्रलय के समय सुप्त रही दिव्य ऊर्जा सृष्टि के प्रभात में भगवान् से पुनः आलिंगन करती है, वैसे ही अम्बिका — पुनर्जन्मी सती — ने अपने प्रिय स्वामी शिव से, अपने एकमात्र आश्रय से, जिनके प्रति वे सदा समर्पित रहीं, पुनः मिलन की अभिलाषा की। मैत्रेय ने यह भी जोड़ा कि उन्होंने भगवान् शिव की यह पावन कथा — जिन्होंने दक्ष के यज्ञ को ध्वस्त किया और फिर उसे पुनः स्थापित होने दिया — बृहस्पति के शिष्य तथा महान् भक्त उद्धव से सुनी थी। और उन्होंने इसे सुनने वाले सबके लिए एक वचन के साथ समाप्त किया।

इदं पवित्रं परमीशचेष्टितं
यशस्यमायुष्यमघौघमर्षणम् ।
यो नित्यदाकर्ण्य नरोऽनुकीर्तयेद्
धुनोत्यघं कौरव भक्तिभावतः ॥ ६१ ॥

idaṁ pavitraṁ param īśa-ceṣṭitaṁ yaśasyam āyuṣyam aghaughā-marṣaṇam yo nityadākarṇya naro 'nukīrtayed dhunoty aghaṁ kaurava bhakti-bhāvataḥ

अर्थ: भगवान् की लीला का यह परम पवित्र वृत्तान्त — जो यश तथा दीर्घ आयु प्रदान करता है और पापों के समूह को धो देता है — हे कुरुवंशी, जो कोई इसे प्रतिदिन भक्ति से सुनता तथा कीर्तन करता है, वह समस्त पाप को झाड़ देता है। (स्कन्ध 4, अध्याय 7, श्लोक 61)



कथा का कोमल समापन: सती, अपने पूर्व शरीर को त्यागकर, हिमवान् तथा मेना की पुत्री के रूप में पुनः जन्म लेती हैं, अपने प्रिय स्वामी शिव से पुनः मिलन की अभिलाषा से (श्लोक 58-59)।

उसी कृपापूर्ण वचन के साथ सप्तम अध्याय समाप्त होता है, और उसके साथ दक्ष तथा सती की सम्पूर्ण कथा — एक कथा जो अभिमान तथा अपमान में आरम्भ हुई, शोक तथा अग्नि से होकर गुज़री, और क्षमा, पुनर्मिलन तथा स्वयं भगवान् के प्राकट्य में समाप्त होती है।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. भगवान् की कृपा उनके क्रोध से बढ़कर है। प्रसन्न होने पर शिव के प्रथम वचन यही हैं कि वे मोहित जनों के अपराध का स्मरण तक नहीं करते, क्योंकि उनका दण्ड कभी विजेता का प्रतिशोध नहीं बल्कि पिता का सुधार था। जो कुछ अनुशासन ने छीना था उसे वे तुरन्त लौटा देते हैं — दक्ष को नया शिर, भग को नेत्र, पूषा को चबाने की शक्ति, ऋत्विजों को भुजाएँ, भृगु को दाढ़ी — जिस क्षण शिक्षा ग्रहण हो जाती है, इतनी पूर्णता से कि उपचार मूल घाव से भी आगे निकल जाता है (श्लोक 2-5)।
2. एक कृपादृष्टि हृदय को धो सकती है। दक्ष का द्वेष, जो शिव के प्रति लम्बे समय से जमा था, एक कृपापूर्ण दृष्टि में घुल जाता है, “शरद् के सरोवर के समान निर्मल।” दिव्य का स्पर्श उसे शुद्ध कर देता है जिसे हमारे अपने प्रयत्न नहीं कर सकते (श्लोक 10)।
3. भगवान् शुद्ध हृदय के समक्ष प्रकट होते हैं। श्रीहरि तभी प्रकट होते हैं जब दक्ष तथा ऋत्विज “शुद्ध मन से” उनका ध्यान करते हैं। सच्ची, निष्कपट भक्ति ही भगवान् की उपस्थिति को आकर्षित करती है (श्लोक 18)।
4. सम्यक् पूजा किसी को बहिष्कृत नहीं करती। भगवान् की अपनी शिक्षा सुनने के बाद, दक्ष रुद्र तथा अन्य सभी देवताओं को उनका अधिकारपूर्ण भाग देकर यज्ञ को पूर्ण करते हैं — वही चूक जिसने अनुष्ठान को पहले ध्वस्त किया था, अब समावेशी पूजा के एक कार्य से मिट जाती है (श्लोक 55-57)।
5. सभी नाम उसी एक की ओर संकेत करते हैं। ठीक उसी विवाद का सामना करते हुए जिसने उनका यज्ञ ध्वस्त किया था, भगवान् स्वयं घोषणा करते हैं कि वे, ब्रह्मा तथा शिव भिन्न-भिन्न नामों से प्रकट होने वाली एक ही आत्मा हैं, और जो कोई उन्हें विभाजित देखना छोड़ देता है वह सच्ची शान्ति को प्राप्त करता है (श्लोक 54)।

6. भक्ति कभी नष्ट नहीं होती, और वियोग अन्त नहीं है। सती, शिव के प्रति पूर्णतः समर्पित, उनसे पुनः मिलने के लिए फिर जन्म लेती हैं। यह अध्याय वचन देता है कि दिव्य पर स्थिर प्रेम, मृत्यु को भी पार कर, अपना मार्ग वापस पा लेता है (श्लोक 58-59)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

यदि पंचम अध्याय गर्जन था और षष्ठ शीतल छाया, तो यह सप्तम अध्याय सूर्योदय है। जो कुछ टूटा था वह जुड़ जाता है; जो कुछ शत्रुतापूर्ण था वह मिल जाता है; और केन्द्र में स्वयं भगवान् का प्राकट्य खड़ा है, जो अनुष्ठान की भव्यता से नहीं बल्कि उन शुद्ध हृदयों से आकर्षित हुआ जो उनके लिए तरसते थे। इस चाप में एक सम्पूर्ण आध्यात्मिक जीवन अंकित है। हम भी किसी अभिमान या विच्छेद में आरम्भ करते हैं; हम भी विनम्र करने वाले परिणामों से मिलते हैं; और हमें भी, जिस क्षण हम लौटते हैं, निन्दा नहीं बल्कि पुनरुद्धार अर्पित किया जाता है। हृदय को सबसे अधिक जो स्पर्श करता है वह शिव की वह कृपादृष्टि है जो दक्ष के द्वेष को “शरद् के सरोवर के समान” निर्मल कर देती है — क्योंकि यह हमें बताती है कि जो परिवर्तन हम अपने प्रयत्न से नहीं कर सकते, वह दिव्य की करुणा से एक क्षण में हो सकता है, यदि हम केवल उसके प्रकाश में खड़े हों। और यह समापन-वचन कि सती अपने स्वामी को पुनः खोजने के लिए फिर जन्म लेती हैं, हमें समस्त भक्ति के हृदय में स्थित उस शान्त आश्वासन के साथ छोड़ जाता है: भगवान् को अर्पित प्रेम कभी व्यर्थ नहीं जाता, और अपने लक्ष्य से कभी सचमुच पृथक् नहीं होता।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, इस अध्याय द्वारा उत्सवित कृपा को ग्रहण करें और आगे बढ़ाएँ। जैसा मैत्रेय वचन देते हैं कि जो कोई इस कथा को भक्ति से सुनता तथा कीर्तन करता है वह पाप से मुक्त हो जाता है, कुछ मिनट लेकर इस इतिहास के किसी एक अंश को स्वर से पढ़ें या स्मरण करें — शिव की करुणा, श्रीहरि का प्राकट्य, या सती का पुनरागमन — और उसे इन शब्दों के साथ अपने हृदय में बैठने दें — “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय”। फिर, दक्ष के धुले हुए हृदय की भावना में, किसी एक द्वेष को छोड़ दें जिसे आप पकड़े हुए हैं, उसे भगवान् को अर्पित करते हुए और यह प्रार्थना करते हुए कि आपका अपना हृदय “शरद् के सरोवर के समान निर्मल” बन जाए। सुनने, पुनः कहने तथा क्षमा करने में, आप उस मेल-मिलाप में अपना छोटा-सा भाग लेते हैं जिसे यह अध्याय प्रकट करता है।

उपसंहार

चतुर्थ स्कन्ध का सप्तम अध्याय कृपा तथा परिपूर्ति का अध्याय है। ब्रह्मा की प्रार्थना से प्रसन्न होकर, भगवान् शिव समस्त द्वेष त्याग देते हैं और दक्ष को बकरे के शिर के साथ पुनर्जीवित करते हैं, आहत देवताओं को स्वस्थ करते हैं, और यज्ञ को पुनः आरम्भ होने देते हैं। दक्ष, जिनका द्वेष शिव की कृपादृष्टि से धुल गया, कृतज्ञता की प्रार्थना अर्पित करते हैं; और जैसे ही वे तथा ऋत्विज शुद्ध हृदय से ध्यान करते हैं, परम भगवान् साक्षात् वहाँ आ उपस्थित होते हैं — गरुड़-वाहन, तेज में सूर्य को भी मात देते हुए। समस्त सभा झुककर उनकी महिमा गाती है, यज्ञ प्रत्येक देवता को उसका उचित भाग देकर पूर्ण होता है, और देवगण शान्ति से विदा होते हैं। मैत्रेय इस कोमल समाचार के साथ समाप्त करते हैं कि सती अपने स्वामी से पुनः मिलने के लिए हिमवान् की पुत्री के रूप में जन्म ले चुकी हैं, और इस वचन के साथ कि जो कोई इस पावन कथा को भक्ति से सुनता है वह पाप से मुक्त हो जाता है। इस प्रकार दक्ष तथा सती का लम्बा इतिहास, जो अभिमान में आरम्भ हुआ, क्षमा, पुनर्मिलन तथा भगवान् के दर्शन में समाप्त होता है।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति को जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, पूर्ण), चतुर्थ स्कन्ध, सप्तम अध्याय, पृ. 316–324 (PDF पृ. 378–386)।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज्ञम · बिश्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान् पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं और उनके अर्थ सारांश के रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी भी प्रकाशक द्वारा किसी सम्बद्धता या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-skandh-4-adhyay-7-daksha-yajna-paripurti.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम · कल्कि अवतार इंटरनेशनल · बिश्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट